इकाई 15 मुगल प्रशासन: मनसब और जागीर

इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य

15.1 प्रस्तावना

15.2 मनसब व्यवस्था
- 15.2.1 दोहरा पद: **जात और सवार**
- 15.2.2 मनसबदारों की तीन श्रेणियां
- 15.2.3 मनसबदारों की नियुक्ति और पदोन्नति
- 15.2.4 सेना का रख-रखाव और भुगतान
- 15.2.5 अधिग्रहण व्यवस्था

15.3 मनसबदारों का संघटन

15.4 **जागीर** व्यवस्था
- 15.4.1 आरंभिक चरण
- 15.4.2 **जागीर** व्यवस्था का संगठन
- 15.4.3 जागीरों के विभिन्न प्रकार
- 15.4.4 जागीरों का प्रबंधन

15.5 सारांश

15.6 शब्दावली

15.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

15.0 उद्देश्य

इस इकाई में हम मुगल प्रशासन के दो मुख्य अवयवों **मनसब** और **जागीर** व्यवस्थाओं पर विचार-विमर्श करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

- अकबर के अधीन मनसब व्यवस्था की आधारभूत विशेषताओं को जान सकेंगे,
- सत्रहवीं शताब्दी के दौरान मनसबदारी में हुए परिवर्तनों पर प्रकाश डाल सकेंगे,
- **जागीरदारी** की कार्यपद्धति और मुख्य विशेषताओं को रेखांकित कर सकेंगे, और
- **जागीर** के विभिन्न प्रकारों का उल्लेख कर सकेंगे।

15.1 प्रस्तावना

भारत में मुगलों के अधीन मनसब और जागीर व्यवस्था अचानक सामने नहीं आ गयी, समय के साथ-साथ उनका धीरे-धीरे विकास हुआ। ये संस्थाएं पश्चिम एशिया से ग्रहीत की गयीं और भारत की तत्कालीन आवश्यकताओं के परिप्रेक्ष्य में उनमें बदलाव लाया गया।

मनसबदार मुगल नौकरशाही का अंगभूत हिस्सा था और जैसा पर्सिवेल स्पेयर का कहना है यह ''संभ्रांत के भीतर एक संभ्रांत'' के रूप में विकसित हुआ। न्यायालय को छोड़कर सभी सरकारी विभागों में उनकी नियुक्ति हुई। **वजीर, बख्शी, फौजदार, सूबेदार** आदि महत्वपूर्ण पद उन्हें दिए जाते थे। हम लोग जागीर व्यवस्था पर भी विचार-विमर्श करेंगे।

15.2 मनसब व्यवस्था

मनसब शब्द का अर्थ स्थान या पद है और इस प्रकार यह मुगलों की मनसब व्यवस्था में ओहदा या पद को इंगित करता है।

बाबर के समय में पदाधिकारियों के लिए मनसबदार पदावली का उपयोग नहीं होता था, इसके स्थान पर एक दूसरी पदावली **वजहदार** का उपयोग होता था। यह बाबर के बाद मुगलों के अधीन विकसित मनसब व्यवस्था से कुछ मामलों में अलग था।

अकबर अपने सैनिक और नागरिक अधिकारियों को उनकी योग्यता या राज्य के लिए की गयी सेवाओं के आधार पर मनसब प्रदान किया करता था। अधिकारियों का स्तर निर्धारित करने और अपने सैनिकों को वर्गीकृत करने के लिए वह मोटे तौर पर चंगेज खां के सिद्धांतों से प्रेरित था। चंगेज खां की सेना दशमलव व्यवस्था के आधार पर संगठित थी। सबसे छोटी इकाई में दस घुड़सवार शामिल होते थे, उसके बाद एक सौ, एक हजार और इसी प्रकार संख्या बढ़ती जाती थी। अबुल फजल बताते हैं कि अकबर ने मनसबदारों की 66 श्रेणियां बनाई थीं जिसमें 10 घुड़सवारों से लेकर 10,000 घुड़सवारों तक के नायक शामिल थे। पर अबुल फजल ने केवल 33 श्रेणियों का ही नामोल्लेख किया है।

मनसब तीन चीजों पर संकेत करता था:
i) इससे इसके धारक (मनसबदार) की पदानुक्रम में अवस्थिति निर्धारित होती थी।
ii) इससे धारक का वेतन निश्चित होता था।
iii) इससे धारक द्वारा एक खास संख्या में सेना, घोड़े और हथियार रखे जाने का भी निर्धारण होता था।

15.2.1 दोहरा पद: जात और सवार

आरंभ में मनसबदार का पद व्यक्तिगत वेतन, और उसकी सेना का आकार एक संख्या द्वारा ही घोषित होता था। इस स्थिति में अगर कोई व्यक्ति 500 की मनसब प्राप्त करता था तो उसे 500 सैनिक रखने पड़ते थे और उसे इस सेना के रख-रखाव के लिए भत्ता दिया जाता था। इसके अतिरिक्त अनुसूची के अनुसार उन्हें व्यक्तिगत वेतन प्राप्त होता था और अपने पद के अनुरूप उन्हें कुछ खास जिम्मेदारियां भी निभानी पड़ती थीं। कुछ समय बाद मनसबदार का पद एक की जगह दो संख्याओं **जात** और **सवार** द्वारा घोषित किया जाने लगा। यह शुरुआत संभवत: 1595-96 में हुई। पहली संख्या (**जात**) से मनसबदार का व्यक्तिगत वेतन (**तलब-खास**) और पदानुक्रम में उसकी हैसियत और स्थान निर्धारित होता था। दूसरी संख्या (**सवार**) से मनसबदार द्वारा रखे जाने वाले घोड़ों और घुड़सवारों की संख्या तय होती थी और इस सेना (**ताबीनान**) के रख-रखाव के लिए देय राशि तय की जाती थी।

इस दोहरे पद की भूमिका को लेकर कुछ विवाद है। विलियम इरविन का मानना है कि दोहरे पद का अर्थ यह है कि मनसबदारों को अपने व्यक्तिगत वेतन से सेना के दो दलों का रख-रखाव करना पड़ता था। अब्दुल अजीज के विचार आधुनिक विचार से मेल खाते हैं, उनका मानना है कि **जात** वेतन शुद्धत: व्यक्तिगत वेतन था और सेना के रख-रखाव से इसका कोई वास्ता नहीं था। उन्होंने इरविन के सिद्धांत का खंडन करते हुए कहा है कि इसमें केवल एक सैन्य दल का रख-रखाव करना होता था, दो का नहीं। अतहर अली ने स्थिति को पूरी तरह सही परिप्रेक्ष्य में रखा, उनका कहना है कि पहली संख्या (**जात**) से राज्य के पदाधिकारियों के पदानुक्रम में मनसबदारों की अवस्थिति और मनसबदारों का वेतन तय होता था। दूसरे पद (**सवार**) से मनसबदार द्वारा रखे जाने वाले घोडों और घुड़सवारों की संख्या तय होती थी।

15.2.2 मनसबदारों की तीन श्रेणियां

1595-96 में मनसबदारों को तीन समूहों में वर्गीकृत किया गया:

(क) जिनके घुड़सवारों (**सवार**) की संख्या **जात** के बराबर होती थी प्रथम श्रेणी के मनसबदार माने जाते थे।
(ख) जिनके पास **जात** की संख्या के आधे या आधे से अधिक घुड़सवार होते थे। वे द्वितीय श्रेणी के—तथा
(ग) जिनके घुड़सवारों की संख्या उनकी **जात** संख्या के आधे से कम होती थी तीसरी श्रेणी के **मनसबदार** होते थे।

सवार पद **जात** के बराबर या उससे कम होता था। यहां तक कि अगर **सवार** पद बड़ा भी होता था तो पदानुक्रम में मनसबदार की स्थिति पर फर्क नहीं पड़ता था। उदाहरण के लिए, 4000 **जात** और 2000 **सवार** (संक्षेप में 4000/2000) ओहदे का मनसबदार 3000/3000 के मनसबदार से पद में वरिष्ठ होगा, बाद वाले मनसबदार के पास

घुड़सवारों की संख्या अधिक है पर इससे पहले वाले मनसबदार के पदानुक्रम पर फर्क नहीं पड़ेगा क्योंकि उसका जात पद बड़ा है।

पर मनसबदार जब कठिन क्षेत्र में विद्रोहियों के बीच काम कर रहा होता था तो कई बार इस नियम का पालन नहीं भी किया जाता था। इन मामलों में राज्य **जात** पद को बिना बदले हुए **सवार** पद बढ़ा देता था। निश्चित रूप से यह एक लचीली व्यवस्था थी और इसमें परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन होता रहता था। इस प्रकार आधारभूत ढांचे को बदले बिना इसमें सुधार व परिवर्तन होते रहते थे। सर्शत पद (**मशरूत**) का चलन इसी प्रकार का सुधार था, जिसमें कुछ समय के लिए सवार पद बढ़ा दिया जाता था। यह कार्य संकटकालीन स्थिति में किया जाता था। जिसके तहत राज्य के खर्च पर अधिक घुड़सवारों को भर्ती करने की अनुमति प्रदान की जाती थी।

जहांगीर ने अपने शासनक में **दो-अस्पा सिह-अस्पा** व्यवस्था लागू कर एक नया परिवर्तन किया। जहांगीर के शासन के दसवें वर्ष में यह पद सबसे पहले महाबत खां को प्राप्त हुआ। इसके अनुसार, मनसबदार का आधा या पूरा **सवार** पद **दो-अस्पा सिह-अस्पा** बना दिया गया। उदाहरण के लिए, यदि एक मनसबदार के पास 5000/4000 **सवार** का मनसब हो तो उसे **हुमा दो-अस्पा सिह-अस्पा** (सभी-दो घोड़ों) प्रदान किया जा सकता था। इस मामले में मूल **सवार** पद को नजरअंदाज कर मनसबदार को **दो-अस्पा सिह-अस्पा** या दोगनी संख्या (यहां 4000 + 4000 = 8000) में सैनिक और घोड़े रखने की अनुमति दी जा सकती थी। फिर यदि 4000 जात 4000 सवार का पद हो जिसमें से 2000 **दो-अस्पा सिह-अस्पा** हो, इसका मतलब यह होता था कि मूल 4000 **सवार** पद में से केवल 2000 साधारण या **बरावर्दी** सैनिक होंगे और 2000 **दो-अस्पा सिह-अस्पा** के जरिए इस संख्या का दोगुना अर्थात् 4000 सैनिक प्राप्त होंगे। इस प्रकार कुल घुड़सवारों की संख्या 6000 होगी।

दो-अस्पा सिह-अस्पा व्यवस्था अपनाने के पीछे क्या कारण हो सकते थे? इस मामले में हमारे स्रोत कोई मदद नहीं करते, पर इस संदर्भ में हम कुछ अनुमान लगा सकते हैं। सम्राट बनने के बाद जहांगीर अपने विश्वासपात्र कुलीनों की पदोन्नति करना चाहता था और उन्हें सैनिक दृष्टि से मजबूत करना चाहता था, पर इसमें कुछ व्यावहारिक समस्याएं थीं। 15.2.2 उपभाग में हमने यह पढ़ा था कि आमतौर पर **सवार** पद **जात** पद से बड़ा नहीं हो सकता था। इस स्थिति में, **सवार** पद बढ़ाने के लिए **जात** पद को भी बढ़ाना पड़ता। **जात** पद में बढ़ोत्तरी करने से व्यक्तिगत वेतन के रूप में अतिरिक्त भुगतान करना पड़ता और इससे राजकोष पर बोझ बढ़ता। इसके अलावा पदानुक्रम में कुछ कुलीनों को आगे बढ़ाना पड़ता जिससे अन्य कुलीनों में इर्ष्या का भाव पैदा होता।

वस्तुतः **दो-अस्पा सिह-अस्पा** ऐसा तरीका था जिसके माध्यम से **जात** पद या मनसब पदानुक्रम को छेड़े बिना अतिरिक्त **सवार** पद प्रदान किया जा सकता था। इसके माध्यम से **जात** पद में बढ़ोत्तरी न करने से राज्य के खर्च में भी बचत होती थी।

15.2.3 मनसबदारों की नियुक्ति और पदोन्नति

आमतौर पर **मीर बख्शी** सम्राट के सामने उन प्रत्याशियों को उपस्थित करता था जिन्हें सम्राट स्वयं नियुक्त करता था। नियुक्ति के लिए आमतौर पर प्रतिष्ठित कुलीनों और प्रांतों के राज्यपालों की अनुशंसाओं को स्वीकार किया जा सकता था। नियुक्ति के लिए बृहत प्रक्रिया अपनायी जाती थी जिसमें **दीवान, बख्शी** और अन्य लोग शामिल होते थे, इसके बाद सम्राट के पास नियुक्ति के लिए नाम भेजा जाता था। नियुक्ति के बाद **वजीर** की मुहर लगा फरमान जारी किया जाता था। पदोन्नति के मामले में भी यही प्रक्रिया अपनायी जाती थी।

मनसब प्रदान करना सम्राट का विशेषाधिकार था। वह किसी भी व्यक्ति को मनसबदार के रूप में नियुक्त कर सकता था। चीन के समान यहां किसी लिखित परीक्षा की व्यवस्था नहीं थी। आमतौर पर कुछ नियमों का पालन किया जाता था। मुगल सम्राटों के शासन कालों में नियुक्त मनसबदारों का सर्वेक्षण करने पर पता चलता है कि अन्य की तुलना में कुछ समूहों को वरीयता दी जाती थी।

पहले से मनसबदार के रूप में कार्य कर रहे व्यक्तियों के पुत्रों और नजदीकी रिश्तेदारों को प्राथमिकता दी जाती थी। इस समूह को **खानजादा** के नाम से जाना जाता था। इसके बाद

दूसरे राज्यों में बड़े पदों पर कार्यरत लोगों को वरीयता दी जाती थी। ऐसे लोगों में उजबेक और सफवी सम्राज्यों और दक्खन राज्यों से आने वाले प्रमुख थे। इसमें ईरानी, तूरानी, इराकी और खुरासानी शामिल थे। मुगल मनसब का आकर्षण इतना जबरदस्त था कि 1636 में बीजापुर के आदिल शाह ने मुगल सम्राट से अनुरोध किया था कि उसके कुलीनों के बीच से मनसबदार न नियुक्त किए जाएं।

नियुक्ति और पदोन्नति में स्वायत्त राज्यों के राजाओं को भी प्राथमिकता दी गयी। इस श्रेणी में लाभ मुख्य रूप से राजपूत राजाओं को मिला। आमतौर पर कार्यकुशलता और वंश के आधार पर पदोन्नति की जाती थी। औरंगजेब के शासनकाल के अंतिम वर्षों में मनूकी ने लिखा है कि "हज़ारी या एक हजार का वेतन पाने के लिए काफी इंतजार और काफी मेहनत करनी पड़ती थी। सम्राट इसे प्रदान करने में काफी मितव्ययिता से काम करता था और यह पद उन्हीं को दिया जाता था जो अपनी सेवा और कार्यकुशलता के बल पर इसे प्राप्त करने की योग्यता रखते थे। अगर किसी को इस पद के समकक्ष वेतन दिया जाता तो वे उसे **उमरा** या **अमीर** की पदवी भी देते, जिसका अर्थ कुलीन होता था"। हालांकि व्यावहारिक तौर पर पदोन्नति में प्रजातीय आधार की महत्वपूर्ण भूमिका होती थी। अटल निष्ठा को भी विशेष महत्व दिया जाता था।

बोध प्रश्न 1

1. **जात** और **सवार** पद को परिभाषित कीजिए।

....

....

....

....

....

2. मनसबदारों की तीन श्रेणियां क्या थीं?

....

....

....

....

....

15.2.4 सेना का रख-रखाव और भुगतान

मनसबदारों को अपनी सेना का नियमित निरीक्षण और शरीरिक सत्यापन कराना पड़ता था। यह कार्य **मीर बख्शी** का विभाग संपन्न करता था। इसके लिए विशेष कार्य प्रणाली अपनायी जाती थी। इसे **दाग-ओ चेहरा** के नाम से जाना जाता था। जब कोई एक कुलीन अपने घोड़ों को प्रस्तुत करता था तो उन घोड़ों को एक **मुहर** (दाग) द्वारा खास तरीके से चिन्हित कर दिया जाता था ताकि दूसरे कुलीनों के घोड़ों से उन्हे अलग किया जा सके। सैनिकों का शारीरिक ब्यौरा और पहचान चिह्न (चेहरा) भी दर्ज किया जाता था। इस प्रकार एक ही घोड़े या सैनिक को दोबारा निरीक्षण के लिए प्रस्तुत करने की संभावना काफी कम हो जाती थी। इसका सख्ती से पालन होता था। कई ऐसे मामलों की भी जानकारी मिलती है जिसमें निश्चित संख्या में सेना न रखने के कारण पदावनति भी कर दी गयी थी। अब्दुल हमीद लाहौरी ने अपनी पुस्तक **बादशाहनामा** में लिखा है कि शाहजहां के शासनकाल में अगर एक मनसबदार अपनी **जागीर** में ही कार्यभार संभाल रहा होता था तो उसे अपने **सवार** पद की एक तिहाई सेना खुद जुटानी पड़ती थी। **जागीर** से बाहर कार्यरत रहने की स्थिति में उसे एक चौथाई सेना जुटानी पड़ती थी। बल्ख और समरकंद में रहने पर यह अनुपात 1/5 हो जाता था।

जात पद के आधार पर वेतन निश्चित होता था, पर इनके बीच कोई गणितीय या आनुपातिक संबध नहीं था। दूसरे शब्दों में, वेतन एक ही अनुपात में ज्यादा या कम नहीं होता था।

नीचे दी गयी तालिका में अकबर के शासनकाल में **जात** पद के लिए प्रति महीने वेतन का नमूना प्रस्तुत किया गया है। (कृपया ध्यान रखिए कि अकबर के शासनकाल में 5000 से ऊपर का **जात** पद केवल राजकुमारों को दिया जाता था। अकबर के शासनकाल के अंतिम वर्षों में राजा मान सिंह अकेला कुलीन था जिसे 7000 **जात** का पद प्राप्त था)।

जात पद का वेतन

जात पद	श्रेणी I (रुपये)	श्रेणी II (रुपये)	श्रेणी III (रुपये)
7000	45,000	—	—
5000	30,000	29,000	28,000
4000	22,000	21,800	21,600
3000	17,000	16,800	16,700
2000	12,000	11,900	11,800
1000	8,200	8,100	8,000

सवार पद की संख्या कुछ भी हो प्रत्येक सैनिक के वेतन का कुल योग ही सवार पद का बेतन होता था। सैनिकों को दिया जाने वाला वेतन निश्चित और सभी जगह एक प्रकार का था। अकबर के शासनकाल में कई बातों से वेतन की दर निश्चित होती थी, जैसे प्रति घुड़सवार घोड़ों की संख्या (दाग के लिए प्रस्तुत), घोड़ों की नस्ल आदि। यह दर 25 रुपये से लेकर 15 रुपये प्रतिमाह के बीच निर्धारित की जाती थी।

मासिक वेतन

आमतौर पर मनसबदारों को राजस्व आवंटन (जागीर) के जरिए भुगतान किया जाता था। इसमें सबसे बड़ी समस्या यह थी कि एक वर्ष में **जागीर** की अनुमानित आय (**जमा**) के आधार पर आकलन किया जाता था। यह पाया जाता था कि वास्तविक राजस्व वसूली (**हासिल**) अनुमानित आय से हमेशा कम होती थी। इस स्थिति में मासिक वेतन की पद्धति से मनसबदारों का वेतन तय किया जाता था। उदाहरण के लिए, अगर जागीर की वास्तविक आय जमा की आधी होती थी तो इसे **शशमाहा** (छमाही) कहते थे। अगर आय एक चौथाई होती थी तो इसे **सिमाहा** (तिमाही) माना जाता था। नगद भुगतान में भी मासिक वेतन पद्धति लागू होती थी।

निर्धारित वेतन से कटौती का भी प्रावधान था। सबसे ज्यादा कटौती दक्खनियों से की जाती थी जिनके वेतन का एक चौथाई (चौथाई) हिस्सा काट लिया जाता था। इसके अतिरिक्त सम्राट के मवेशियों के चारे के खर्च के लिए **खुराक दव्वाब** नामक कटौती भी की जाती थी। नकद वेतन प्राप्त करने वाले से एक रुपये में दो **दाम (दोदामी)** काट लिया जाता था। इसके अलावा विभिन्न कारणों से जुर्माना भी वसूला जाता था। वेतन में इस प्रकार की कटौतियों से कुलीनों का वेतन निश्चित रूप से कम हो जाता था।

इकाई 12 में आप पढ़ चुके है कि किस प्रकार साम्राज्य के राजस्व स्रोतों का शासकीय वर्ग के बीच बंटवारा होता था। ऐसा अनुमान है कि सम्राज्य के कुल राज्स्व स्रोत का 80 प्रतिशत 1,571 मनसबदारों द्वारा उपयोग में लाया जाता था। इससे पता चलता है कि मनसबदार कितने शक्तिशाली थे।

15.2.5 अधिग्रहण व्यवस्था

कई समकालीन विवरणों में (खासकर यूरोपीय यात्रियों के) इस प्रथा का जिक्र मिलता है कि कुलीन की मृत्यु के बाद सम्राट उसकी संपदा अधिगृहीत कर लेता था। इसे अधिग्रहण के नाम से जाना जाता था। इसका कारण था कि अक्सर कुलीन राज्य से कर्ज लिया करते थे जिनका उनकी मृत्यु तक भुगतान नहीं हो पाता था। कुलीनों की संपत्ति के अधिग्रहण और राज्य की मांग (**मुतालबा**) में समायोजन तथा बची हुई संपत्ति का उसके उत्तराधिकारियों में बंटवारे का काम **खान-ए सामां** (देखिए इकाई 14) किया करता था। कभी-कभी सम्राट स्वयं, इस्लामी उत्तराधिकार कानून की परवाह न करते हुए संपत्ति का बंटवारा अपनी इच्छानुसार उत्तराधिकारियों के बीच कर देता था। ऐसा प्रतीत होता है कि अधिकांश मामलों में सम्राट की इच्छा ही सर्वोपरि होती थी। कभी-कभी राज्य पूरी संपत्ति की जब्ती पर जोर देता था। 1666 में औरंगजेब ने फरमान जारी किया कि उत्तराधिकारीहीन कुलीन की मृत्यु के बाद उसकी सारी संपत्ति राज्य कोष में जमा करवानी होगी। 1691 के फरमान द्वारा इसकी पुष्टि की गयी जिसमें अधिकारियों को उन कुलीनों की संपत्ति जब्त न करने का

आदेश दिया गया जिनके उत्तराधिकारी राज्य सेवा में कार्यरत थे क्योंकि उनसे **मुतालबा** के भुगतान के लिए कहा जा सकता था।

15.3 मनसबदारों का संघटन

इकाई 12 में आप शासकीय वर्ग के प्रजातीय संघटन के बारे में पढ़ चुके हैं। यहां हम काफी संक्षेप में उसे पुनः स्मरण करेंगे।

सैद्धांतिक रूप में मनसबदारी का द्वार सबके लिए खुला हुआ था, पर व्यावहारिक तौर पर मुगल सम्राट व्यक्ति के वंश को काफी महत्व देते थे। ऐसा लगता है कि **खानाजादों** (मनसबदारों के सेवारत संबंधी या उत्तराधिकारी) को प्राथमिकता मिलती थी। औरंगजेब के शासनकाल में 1000 और उसके ऊपर वाले 575 मनसबदारों में से 272 (लगभग 47 प्रतिशत) **खानाज़ाद** थे। **खानाज़ादों** के अतिरिक्त **ज़मींदारों** को भी मनसबदार नियुक्त किया जाता था। 1707 में 575 मनसबदारों में 8 प्रतिशत **जमींदार** थे। मुगलों ने मनसबदारी में ईरानी, चगताई, उजबेकों के साथ-साथ दक्खनियों का भी स्वागत किया। कुछ प्रजातीय समूहों की स्थिति काफी मजबूत थी। इनमें तूरानी (मध्य एशियाई), ईरानी, अफगान, भारतीय मुसलमान (**शेखजादे**), राजपूत, मराठा और दक्खनी प्रमुख हैं। इनमें से अंतिम दो समूहों की नियुक्ति औरंगजेब के शासनकाल में बड़े पैमाने पर हुई थी। ये नियुक्तियां फौजी कारणों से प्रेरित थीं।

बोध प्रश्न 2

1. मासिक वेतन का क्या मतलब था?

....

....

....

....

....

2. दो-अस्पा सिह-अस्पा व्यवस्था क्यों अपनायी गयी?

....

....

....

....

....

3. अधिग्रहण व्यवस्था से आप क्या समझते हैं?

....

....

....

....

....

15.4 जागीर व्यवस्था

दिल्ली सल्तनत में प्रदान किए गए राजस्व आवंटन को **इक्ता** और इसके प्राप्तकर्ता को **इक्तादार** के नाम से जाना जाता था (देखिए पाठ्यक्रम इ. एच. आई 3 खंड 5 और 6) कृषकों से अधिशेष वसलने और कुलीनों के बीच इसे वितरित करने के लिए यह व्यवस्था

बनाई गयी थी। इसके अंतर्गत प्राप्तकर्त्ता को अपने क्षेत्र के प्रशासन की भी देखरेख करनी पड़ती थी। मुगल सम्राटों ने भी यही व्यवस्था अपनाई। नगद वेतन के स्थान पर ये भू-राजस्व आवंटन प्रदान किये जाते थे। आमतौर पर आवंटित क्षेत्र को **जागीर** और इसके प्राप्तकर्ता को **जागीरदार** कहा जाता था। कभी-कभी **इक्ता/इक्तादार** और **तयुल/तयुलदार** जैसी पदावलियों का भी उपयोग किया जाता था। लेकिन इस पदावली का प्रयोग काफी कम किया जाता था। यह बात स्पष्ट हो जानी चाहिए कि जागीर व्यवस्था में भूमि का आवंटन नहीं होता था, बल्कि भूमि/क्षेत्र से प्राप्त आय/राजस्व जागीरदारों को दी जाती थी। समयानुसार इस व्यवस्था का विकास हुआ और पूरी तरह स्थापित होने के पहले इसमें कई परिवर्तन किये गये। हालांकि आधारभूत ढांचा अकबर के शासनकाल में विकसित हुआ था। आइए, पहले हम जागीर व्यवस्था के आरंभिक रूप की चर्चा करें।

15.4.1 आरंभिक चरण

अपनी जीत के बाद बाबर ने भूतपूर्व अफगान सरदारों को पुनः स्थापित किया तथा जीते गए क्षेत्र का लगभग एक तिहाई से ज्यादा हिस्सा उन्हें आवंटित किया। इस प्रकार के कार्यभार को **वजह** (**वजह** का अर्थ पुरस्कार होता है) और प्राप्तकर्त्ता को **वजहदार** के रूप में जाना गया। क्षेत्र के कुल राजस्व का एक हिस्सा वजह के रूप में आवंटित किया गया। शेष राजस्व को **खालसा** का हिस्सा माना गया। **जमींदारों** को अपने ही इलाके में पुनस्थापित किया गया पर जीते गये अन्य इलाकों में बाबर ने हाकिमों (राज्यपालों) को नियुक्त किया। हुमायूं के शासनकाल में यह प्रथा कायम रही।

15.4.2 जागीर व्यवस्था का संगठन

अकबर के शासनकाल में सभी क्षेत्रों को मोटेतौर पर **खालसा** और **जागीर** में विभक्त किया गया। पहले का राजस्व राजकीय कोष को जाता था जबकि **जागीरदारों** को उनके पद के अनुसार नकद वेतन के बदले **जागीर** प्रदान की जाती थी। कुछ मनसबदारों को नकद वेतन मिलता था और उन्हें नकदी के रूप में जाना जाता था। कुछ को **जागीर**, और नकद दोनों रूपों में भुगतान किया जाता था। राज्य का अधिकांश क्षेत्र मनसबदारों को उनके पद के अनुसार आवंटित किया जाता था। विभिन्न क्षेत्रों से अनुमानित राजस्व को **जमा** या **जमादामी** कहते थे, क्योंकि इसका **दाम** के रूप में आकलन होता था (एक **दाम**—एक छोटा तांबे का सिक्का, आनुपातिक तौर पर चांदी के एक रुपये का 1/40वां भाग)। **जमा** में भू-राजस्व, अंतर्देशीय पारगमन शुल्क, बंदरगाह सीमा शुल्क और **सायर जिहात** नामक अन्य कर शामिल होते थे। वास्तविक राजस्व वसूली के लिए राजस्व अधिकारी **हासिल** शब्द का इस्तेमाल करते थे। **जमा** और **हासिल** दो शब्दों को आप ठीक तरह से समझ लें क्योंकि इसका बार-बार जिक्र आएगा। राजस्व अधिकारी **पैबाकी** नामक एक अन्य शब्द का भी इस्तेमाल करते थे। यह उन इलाकों के लिए प्रयुक्त किया जाता था जिन्हें आवंटन के लिए सुरक्षित रखा जाता था, जब वह किसी मनसबदार को प्रदान नहीं किये जाते थे उन्हें **पैबाकी** कहा जाता था। अकबर के शासनकाल के 31वें वर्ष में दिल्ली, अवध और इलाहाबाद में **खालसा** का जमा कुल राजस्व का 5 प्रतिशत था। जहांगीर के शासनकाल में कुल क्षेत्र का 9/10 हिस्सा **जागीर** के रूप में आवंटित था और केवल 1/10 **खालसा** के लिए उपलब्ध था। शाहजहां के शासनकाल में यह बढ़कर 1/11 हो गया और उसके शासनकाल के बीसवें वर्ष में यह लगभग 1/7वां हिस्सा था। यही प्रवृत्ति आगे के शासनकाल में भी कायम रही, औरंगजेब के शासनकाल के दसवें वर्ष में **खालसा** का **जमा** (अनुमानित आय) कुल राजस्व का लगभग 1/5वां हिस्सा था। हालांकि औरंगजेब के शासन काल के उत्तरार्द्ध में और **जागीरों** की संख्या में वृद्धि होने से **खालसा** पर दबाव ज्यादा बढ़ गया।

प्रशासनिक कारणों से **जागीरदारों** का एक **जागीर** से दूसरे **जागीर** में स्थानांतरण **जागीर** व्यवस्था की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता थी। इन स्थानांतरणों से **जागीरदारों** के स्थानीय स्तर पर अपना प्रभाव बढ़ाने और जड़ें जमाने के प्रयास पर नियंत्रण रखा जा सका। इसके साथ-साथ इस प्रथा से एक घाटा यह हुआ कि अपने इलाके के विकास के लिए **जागीरदार** कोई दीर्घकालीन योजना बनाने में रुचि नहीं रखते थे। कम से कम समय में ज्यादा से ज्यादा राजस्व वसूल करना ही उनका उद्देश्य रह गया।

15.4.3 जागीरों के विभिन्न प्रकार

आमतौर पर चार प्रकार के राजस्व आवंटन किए जाते थे:

क) वेतन के रूप में दी गयी **जागीर** को **जागीर-ए तनखा** के रूप में जाना जाता था।
ख) किसी व्यक्ति को दी गयी सशर्त **जागीर** को **मशरूत जागीर** कहा जाता था।
ग) पद और कार्य से रहित **जागीरों** को **इनाम जागीर** कहा जाता था, और
घ) **जमींदारों** और स्वायत्त शासकों को जब उनके अपने क्षेत्र **जागीर** के रूप में दिए जाते थे तो उनको **वतन जागीर** कहते थे।

जहांगीर के शासनकाल में मुसलमान कुलीनों को वतन जागीर से मिलती-जुलती जागीरें दी गयीं, इन्हें **अल-तमगा** के नाम से जाना जाता था।

तनखा जागीर का हर तीन चार साल पर स्थानांतरण होता था। **वतन जागीर** अनुवांशिक और अस्थानांतरणीय होती थी। कभी-कभी **वतन जागीर** को कुछ समय के लिए **खालसा** में भी परिवर्तित किया जा सकता था। 1679 में औरंगजेब ने जोधपुर के मामले में ऐसा ही किया था। जब किसी **जमींदार** या स्थानीय सरदार को मनसबदार बनाया जाता था तो उसे **वतन जागीर** के अतिरिक्त **तनखा** भी दी जाती थी। यह उस स्थिति में होता था जब उसका वेतन उसकी **वतन जागीर** की आय से कम होता था। महाराजा जसवंत सिंह को मारवाड़ में **वतन जागीर** और हिसार में **जागीर-ए तनखा** प्रदान की गई थी।

15.4.4 जागीरों का प्रबंधन

जागीर को राजकीय नियमों के अनुरूप केवल प्राधिकृत राजस्व (**माल वाजिब**) वसूलने का ही अधिकार था। वह अपने **आमिल (अमलगुजार)**, **फोतेदार** (कोषाध्यक्ष) जैसे पदाधिकारियों (**कारकूनों**) की नियुक्ति करता था, जो उसके लिए काम करते थे।

राजकीय पदाधिकारी **जागीरदारों** पर नजर रखा करते थे। **सूबा** के **दीवान** से यह आशा की जाती थी कि वह **जागीरदारों** के शोषण से किसानों की रक्षा करें। अकबर के शासनकाल के बीसवें वर्ष से प्रत्येक प्रांत में **अमीन** नामक अधिकारी की नियुक्ति की गयी। उससे यह अपेक्षा की जाती थी कि वह इस पर नजर रखे कि **जागीरदार** नियमों के अनुरूप राजस्व वसूल करें, संकट की स्थिति में अक्सर **फौजदार** राजस्व वसूल करने में **जागीरदारों** की मदद करते थे। ऐसा लगता है कि औरंगजेब के शासनकाल में बड़े **जागीरदारों** को **फौजदारी** अधिकार भी सौंप दिए गए।

बोध प्रश्न 3

1. **जागीर के विभिन्न प्रकारों में से प्रत्येक पर दो पंक्तियां लिखिए।**

....

....

....

....

....

....

2. **जागीरदारों का स्थानांतरण क्यों किया जाता था?**

....

....

....

....

....

15.5 सारांश

मनसबदारी और **जागीरदारी** मुगल साम्राज्य की दो प्रमुख संस्थाएं थीं। नागरिक और सैनिक दोनों तरह के प्रशासन में इनकी भूमिका महत्वपूर्ण थी। केन्द्रीकृत प्रशासनिक

व्यवस्था के साथ-साथ बड़ी फौज खड़ी करने के लिए यह व्यवस्था विकसित की गयी। और उनकी बड़ी फौज की सहायता से साम्राज्य का विस्तार किया जाता था और कार्यकुशलता से इसे संचालित किया जाता था। मनसब व्यवस्था की प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार हैं:

- मनसबदारों को **जात** और **सवार** का दोहरा पद प्राप्त होता था। **जात** से प्रशासनिक पदानुक्रम में अधिकारी की हैसियत का पता चलता था और इससे उनका व्यक्तिगत वेतन भी निर्धारित होता था। **सवार** उनके द्वारा रखी जाने वाली सेना को घोषित करता था।
- **जात** और **सवार** संख्या के अनुपात के आधार पर मनसबदारों को तीन श्रेणियों में विभक्त किया गया था।
- मनसबदारों के वेतन और उनके द्वारा सेना के रख-रखाव के लिए निश्चित नियम निर्धारित किए गए थे। इन नियमों में आवश्यकतानुसार समय-समय पर परिवर्तन होते रहे।

भू-राजस्व व्यवस्था के प्रबंध के लिए सारी भूमि को **जागीर** और **खालसा** में विभक्त कर दिया गया था। **खालसा** से प्राप्त राजस्व राजकीय कोष तथा **जागीर** से प्राप्त राजस्व मनसबदारों को प्राप्त होता था।

मनसबदारों को **जागीरों** के आवंटन द्वारा भुगतान किया जाता था। एक संस्था के रूप में **जागीर** व्यवस्था का उपयोग किसानों से अधिशेष वसूल करने के लिए किया गया। इसके साथ-साथ इस व्यवस्था से कुलीन शासकीय वर्ग के बीच राजस्व स्रोतों का बंटवारा भी किया गया। चार प्रकार की **जागीरों** में **वतन जागीर** इस दृष्टि से काफी प्रभावी सिद्ध हुआ कि इसके माध्यम से भारतीय राजाओं का मुगल शासकीय वर्ग से सम्मिलित किया जा सका।

15.6 शब्दावली

बरावर्दी	: अकबर के शासनकाल में सेना के रख-रखाव के लिए मनसबदारों को दिए जाने वाले अग्रिम वेतन को बरावर्दी कहते थे। जहांगीर के शासनकाल से सेना के रख-रखाव के लिए कुलीनों को दिए जाने वाले नियमित भुगतान के लिए इसका उपयोग किया जाने लगा।
खानाजाद	: कुलीन के पद पर पहले से कार्य कर रहे व्यक्तियों के पुत्र और नजदीकी संबंधी।
खुराक-दव्वाब	: मवेशियों के लिए चारा भत्ता।
मशरूत	: कुलीनों को दिया जाने वाला सशर्त पद।
तबीनान	: कुलीनों द्वारा रखी गयी सेना।
उमरा	: **अमीर** अर्थात् कुलीन का बहुवचन।

15.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. **जात** से मनसबदार के व्यक्तिगत वेतन का द्योतन होता था जबकि **सवार** उनके द्वारा रखी गयी सेना की ओर इशारा करता था, देखिए उपभाग 15.2.1
2. **जात** और **सवार** पद के आधार पर मनसबदारों को तीन श्रेणियों में विभक्त किया गया था। देखें उपभाग 15.2.2।

बोध प्रश्न 2

1. मनसबदार की अनुमानित आय और वास्तविक आय (मनसबदार द्वारा वसूला गया राजस्व) के अंतर को पाटने के लिए मासिक वेतन की व्यवस्था की गयी थी। देखें उपभाग 15.2.4।

2. **जात** पद में परिवर्तन किए बिना मनसबदारों के **सवार** पद में वृद्धि करने के लिए यह व्यवस्था की गयी थी। देखिए उपभाग 15.2.4।
3. अधिग्रहण के सिद्धांत के द्वारा मुगल शासक मृत कुलीनों की संपदा जब्त कर लेते थे। विस्तार के लिए देखिए उपभाग 15.2.5 ।

बोध प्रश्न 3

1. उपभाग 15.4.3 देखिए, जहां **जागीरों** के चार प्रकारों पर विचार-विमर्श किया गया है।
2. जागीरदारों के पद और वेतनों को समायोजित करने के लिए इनका स्थानांतरण किया जाता था। इसके अलावा इन्हें इसके जरिए अपने क्षेत्रों में जड़ जमाने से भी इन्हें रोका जाता था।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. पी. सरन : मुगलों का प्रांतीय शासन
2. अतहर अली : औरंगज़ेब कालीन मुगल अमीर वर्ग
3. इरफान हबीब : मुगल कालीन भारत की कृषि व्यवस्था
4. घनश्याम दत्त शर्मा : मध्यकालीन भारतीय सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक संस्थायें